मिस पाल

मोहन राकेश

वह दूर से दिखाई देती आकृति मिस पाल ही हो सकती थी। फिर भी विश्वास करने के लिए मैंने अपना चश्मा ठीक किया। निःसन्देह, वह मिस पाल ही थी। यह तो खैर मुझे पता था कि वह उन दिनों कुल्लू में ही कहीं रहती है, पर इस तरह अचानक उससे भेंट हो जाएगी, यह नहीं सोचा था। और उसे सामने देखकर भी मुझे विश्वास नहीं हुआ कि वह स्थायी रूप से कुल्लू और मनाली के बीच उस छोटे- से गांव में रहती होगी। जब वह दिल्ली से नौकरी छोड़कर आई थी, तो लोगों ने उसके बारे में क्या-क्या नहीं सोचा था!

बस रायसन के डाकखाने के पास पहुंचकर रुक गई। मिस पाल डाकखाने के बाहर खड़ी पोस्टमास्टर से कुछ बात कर रही थी। हाथ में वह एक थैला लिए थी। बस के रुकने पर न जाने किस बात त के लिए पोस्टमास्टर को धन्यवाद देती हुई वह बस की तरफ मुड़ी। तभी मैं उतरकर उसके सामने पहुंच गया। एक आदमी के अचानक सामने आ जाने से मिस पाल थोड़ा अचकचा गई, मगर मुझे पहचानते ही उसका चेहरा खुशी और उत्साह से खिल गया।

“रणजीत तुम?” उसने कहा, “तुम यहां कहां से टपक पड़े?” “मैं इस बस से मनाली से आ रहा हूं।” मैंने कहा।

“अच्छा! मनाली तुम कब से आए हुए थे?”

“आठ-दस दिन हुए, आया था। आज वापस जा रहा हूं।”

“आज ही जा रहे हो?” मिस पाल के चेहरे से आधा उत्साह गायब हो गया, “देखो, कितनी बुरी बात है कि आठ-दस दिन से तुम यहां हो और मुझसे मिलने की तुमने कोशिश भी नहीं की। तुम्हें यह तो पता ही था कि मैं आजकल कुल्लू में हूं।” “हां, यह तो पता था, पर यह नहीं पता था कि कुल्लू के किस हिस्से में हो। अब भी तुम अचानक ही दिखाई दे गईं, नहीं मुझे कहां से पता चलता कि तुम इस जंगल को आबाद कर रही हो?”

“सचमुच बहुत बुरी बात है,” मिस पाल उलाहने के स्वर में बोली, “तुम इतने दिनों से यहां हो और और मुझसे तुम्हारी भेंट हुई आज जाने के वक्त।”

ड्राइवर जोर-जोर से हॉर्न बजाने लगा। मिस पाल ने कुछ चिढ़कर ड्राइवर की तरफ देखा और एकसाथ झिड़कने औरक्षमा मांगने के स्वर में कहा, “बस जी एक मिनट। मैं भी इसी बस से कुल्लू चल रही हूं। मुझे कुल्लू की एक सीट दे दीजिए। थैंक यू। थैंक यू वेरी मच!” और फिर मेरी तरफ मुड़कर बोली, “तुम इस बस से कहां तक जा रहे हो?”

“आज तो इस बस से जोगिन्दरनगर जाऊंगा। वहां एक दिन रहकर कल सुबह आगे की बस पकड़ गा।”

ड्राइवर अब और जोर से हॉर्न बजाने लगा। मिस पाल ने एक बार क्रोध और

बेबसी के साथ उसकी तरफ देखाऔर बस के दरवाजे की तरफ बढ़ती हुई बोली, "अच्छा, कुल्लू तक तो हम लोगों का साथ है ही, और बात कुल्लू पहुंचकर करेंगे। मैं तो कहती हूं कि तुम दो-चार दिन यहीं रुको, फिर चले जाना।"

बस में पहले ही बहुत भीड़ थी। दो-तीन आदमी वहां से और चढ़ गए थे, जिससे अन्दर खड़े होने की जगह भी नहीं रही थी। मिस पाल दरवाजे से अन्दर जाने लगी तो कण्डक्टर ने हाय बढ़ाकर उसे रोक दिया। मैंने कण्डक्टर से बहुतेरा कहा कि अन्दर मेरे बाली जगह खाली है, मिस साहब वहां बैठ जाएंगी और मैं भीड़ में किसी तरह खड़ा होकर चला जाऊंगा, मगर कण्डक्टर एक बार जिद पर अड़ा तो अड़ा ही रहा कि और सवारी वह नहीं ले सकता। मैं अभी उससे बात कर ही रहा था कि ड्राइवर ने बस स्टार्ट कर दी। मेरा सामान बस में था, इसलिए मैं दौड़कर चलती बस में सवार हो गया। दरवाजे से अन्दर जाते हुए मैंने एक बार मुड़कर मिस पाल की तरफ देख लिया। वह इस तरह अचकचाई-सी खड़ी थी जैसे कोई उसके हाथ से उसका सामान छीनकर भाग गया हो और उसे समझ न आ रहा हो कि उसे अब क्या करना चाहिए।

बस हल्के-हल्के मोड़ काटती कुल्लू की तरफ बढ़ने लगी। मुझे अफसोस होने लगा कि मिस पाल को बस में जगह नहीं मिली तो मैंने ही क्यों न अपना सामान वहां उतरवा लिया। मेरा टिकट जोगिन्दरनगर का था, पर यह जरूरी नहीं था कि उस टिकट से जोगिन्दरनगर तक जाऊं ही। मगर मिस पाल से भेंट कुछ ऐसे आकस्मिक ढंग से हुई थी और निश्चय करने के लिए समय इतना कम था कि मैं यह बात उस समय सोच भी नहीं सका था। थोड़ा-सा भी समय और मिलता, तो मैं जरूर कुछ देर के लिए वहां उतर जाता। उतने समय में तो मैं मिस पाल से कुशल समाचार भी नहीं पूछ सका था, हालांकि मन में उसके सम्बन्ध में कितना कुछ जानने की उत्सुकता थी। उसके दिल्ली छोड़ने के बाद लोग उसके बारे में जाने क्या-क्या बातें करते रहे थे। किसीका ख्याल था कि उसने कुल्लू में एक रिटायर्ड अंग्रेज मेजर से शादी कर ली है और मेजर ने अपने सेब के बगीचे उसके नाम कर दिए हैं। किसीकी सूचना थी कि उसे वहां सरकार की तरफ से वजीफा मिल रहा है और वह करती बरती कुछ नहीं, वस घूमती और हवा खाती है। कुछ ऐसे लोग भी थे जिनका कहना था कि मिस पाल का दिमाग खराब हो गया है और सरकार उसे इलाज के लिए अमृतसर पागलखाने में भेज रही है। मिस पाल एक दिन अचानक अपनी लगी हुई पांच सौ की नौकरी छोड़कर चली आई थी, ससे लोगों में उसके बारे में तरह-तरह की कहानियां प्रचलित थीं। जिन दिनों मिस पाल ने त्यागपत्र दिया, मैं दिल्ली में नहीं था। लम्बी छुट्टी लेकर बाहर गया था। मगर मिम पाल के नौकरी छोड़ने का कारण मैं काफी हद तक जानता था। वह सूचना विभाग में हम लोगों के साथ काम करती थी और राजेन्द्रनगर में हमारे घर से दस-बारह घर छोड़कर रहती थी। दिल्ली में भी उसका जीवन काफी अकेला था, क्योंकि दफ्तर के ज्यादातर लोगों से उसका मनमुटाव था और बाहर के लोगों से वह मिलती बहुत कम थी। दफ्तर का वातावरण उसे अपने अनुकूल नहीं लगता था। वह वहां एक-एक दिन जैसे गिनकर काटती थी। उसे हर एक से शिकायत थी कि वह घटिया किस्म का आदमी है, जिसके साथ उसका उठना बैठना नहीं हो सकता।

"ये लोग इतने ओछे और बेईमान हैं." वह कहा करती, "इतनी छोटी और कमीनी बातें करते हैं कि मेरा इनके बीच काम करते हर वक्त दम घुटता रहता है। जाने क्यों ये लोग इतनी छोटी-छोटी बातों पर एक-दूसरे से लड़ते हैं और अपने छोटे-छोटे स्वार्थों के लिए एक-दूसरे को कुचलने की कोशिश करते रहते हैं!"

मगर उस बातावरण में उसके दुःखी रहने का मुख्य कारण दूसरा था, जिसे वह मुंह से स्वीकार नहीं करती थी। लोग इस बात को जानते निते थे, थे, इसलिए जान-बूझकर उसे छेड़ने के लिए कुछ-न-कुछ कहते रहते थे। बुखारिया तो रोज ही उसके रंग-रूप पर कोई न कोई टिप्पणी कर देता था।

'क्या बात है मिस पाल, आज रंग बहुत निखर रहा है!"

दूसरी तरफ से जोरावरसिंह बात जोड़ देता, "आजकल मिस पाल पहले से स्लिम भी तो हो रही हैं।"

मिस पाल इन संकेतों से बुरी तरह परेशान हो उठती और कई बार ऐसे मौके पर कमरे से उठकर चली जाती। उसकी पोशाक पर भी लोग तरह-तरह की टिप्पणियां करते रहते थे। वह शायद अपने मुटापे की क्षतिपूति के लिए ही वाल छोटे कटवाती थी, बगैर बांह की कमीजें पहनती थी और बनावसिंगार से चिढ़ होने पर भी रोज काफी समय मेक अप पर खर्च करती थी। मगर दफ्तर में दाखिल होते ही उसे किसी न किसीके मुंह से ऐसी बात सुनने को मिल जाती थी, "मिल पाल, इस नई कमीज का डिजाइन बहुत अच्छा है। आज तो गजब ढा रही हो तुम!"

मिस पाल को इस तरह की हर बात दिल में चुभ जाती थी। जितनी देर दफ्तर में रहती, उसका चेहरा गम्भीर बना रहता। जब पांच बजते, तो वह इस तरह अपनी मेज से उठती जैसे कई घंटे की सजा भोगने के बाद उसे छुट्टी मिली हो। दफ्तर से उठकर वह सीधी अपने घर चली जाती और अगले दिन सुबह दफ्तर के लिए निकलने तक वहीं रहती। शायद दफ्तर के लोगों से तंग आ जाने की वजह से ही वह और लोगों से भी मेल- जोल नहीं रखना चाहती थी। मेरा घर पास होने की वजह से, या शायद इसलिए कि दफ्तर के लोगों में एक मैं ही था जिसने उसे कभी शिकायत का मौका नहीं दिया था, वह कभी शाम को हमारे यहां चली

आती थी। मैं अपनी बुआ के पास रहता था और मिस पाल मेरी बूआ और उनकी लड़कियों से काफी घुल-मिल गई थी। कई बार घर के कामों में वह उनका हाथ भी बंटा देती थी। किसी दिन हम उसके यहां चले जाते थे। वह घर में समय बिताने के लिए संगीत और चित्रकला का अभ्यास करती थी। हम लोग पहुंचते तो उसके कमरे से सितार की आवाज आ रही होती या वह रंग और कूचियां लिए किसी तसवीर में उलझी होती। मगर जब वह इन दोनों में से कोई भी काम न कर रही होती तो अपने तख्त पर बिछे मुलायम गद्दे पर दो तवियों के बीच लेटी छत को ताक रही होती। उसके गद्दे पर जो झीना रेशमी कपड़ा बिछा रहता था, उसे देखकर मुझे बहुत चिढ़ होती थी। मन करता था कि उसे खींचकर बाहर फेंक दूं। उसके कमरे में सितार, तबला, रंग, कैनवस, तसवीरें, कपड़े तथा नहाने और चाय बनाने का सामान इस तरह उलझे-बिखरे रहते थे कि बैठने के लिए कुरसियों का उद्धार करना एक समस्या हो जाती थी। कभी मुझे उसके झीने रेशमी कपड़े वाले तख्त पर बैठना पड़ जाता तो मुझे मन में बहुत ही परेशानी होती। मन करता कि जितनी जल्दी हो वहां से उठ जाऊं। मिस पाल अपने कमरे के चारों तरफ खोजकर जाने कहां से एक चायदानी और तीन-चार टूटी प्यालियां निकाल लेती और हम लोगों को 'फर्स्ट क्लास वोहीमियन कॉफी' पिलाने की तैयारी करने लगती। कभी वह हम लोगों को अपनी बनाई तसवीरें दिखाती और हम तीनों मैं और मेरी दोनों बहनें अपना अज्ञान छिपाने के लिए उनकी प्रशंसा कर देते। मगर कई बार वह हमें बहुत उदास मिलती और ठीक ढंग से बात भी न करती। मेरी बहनें ऐसे मौके पर उससे चिढ़ जातीं और कहतीं कि वे उसके यहां फिर नहीं जाएंगी। मगर मुझे ऐसे अवसर पर मिस पाल से ज्यादा सहानुभूति होती।

आखिरी बार जब मैं मिस पाल के यहां गया, मैंने उसे बहुत ही उदास देखा था। मेरा उन दिनों एपेंडेसाइटिस का आपरेशन हुआ था और मैं कई दिन अस्पताल में रहकर आया था। मिस पाल उन दिनों रोज अस्पताल में खबर पूछने आती रही थी। वूआ अस्पताल में मेरे पास रहती थी पर खाने-पीने का सामान इकट्ठा करना उनके लिए मुश्किल था। मिस पाल सुबह-सुबह आकर सब्जियां और दूध दे जाती थी। जिस दिन मैं उसके यहां गया, उससे एक ही दिन पहले मुझे अस्पताल से छुट्टी मिली। थी और मैं अभी काफी कमजोर था। फिर भी उसने मेरे लिए जो तकलीफ उठाई थी, उसके लिए मैं उसे धन्यवाद देना चाहता था।

मिस पाल ने दफ्तर से छुट्टी ले रखी थी और कमरा बन्द किए अपने गद्दे पर लेटी थी। मुझे पता लगा कि शायद वह सुबह से नहाई भी नहीं है।

"क्या बात है, मिस पाल? तबियत तो ठीक है?" मैंने पूछा।

"तबीयत ठीक है", उसने कहा, "मगर मैं नौकरी छोड़ने की सोच रही हूं।"

"क्यों? कोई खास बात हुई है क्या?"

"नहीं, खास बात क्या होगी? बात बस इतनी ही है मैं ऐसे लोगों के बीच काम कर ही नहीं सकती मैं सोच रही हूं कि दूर के किसी खूबसूरत-से पहाड़ी इलाके में चली जाऊं और वहां रहकर संगीत और चित्रकला का ठीक से अभ्यास करूं। मुझे लगता है, मैं खामखाह यहां अपनी जिन्दगी बरबाद कर रही हूं। मेरी समझ में नहीं आता कि इस तरह की ज़िन्दगी जीने का आखिर मतलब ही क्या है? सुबह उठती हूं, दफ्तर चली जाती हूं। वहां सात-आठ घंटे खराब करके घर आती हूं, खाना खाती हूं और सो जाती हूं। यह सारा का सारा सिलसिला मुझे बिलकुल बेमानी लगता है। मैं सोचती हूं कि मेरी जरूरतें ही कितनी हैं? मैं कहीं भी जाकर एक छोटा-सा कमरा या शैक लं तो थोड़ा-सा ज़रूरत का सामान अपने पास रखकर पचास-साठ या सौ रुपये में गुजारा कर सकती हूं। यहां मैं जो पांच सौ लेती हूं, वे पांच के पांच सौ हर महीने खर्च हो जाते हैं। किस तरह खर्च हो जाते हैं, यह खुद मेरी समझ में नहीं आता। पर अगर ज़िन्दगी इसी तरह चलती है, तो क्यों मैं खामखाह दफ्तर जाने-आने का भार ढोती रहूं? बाहर रहने में कम से कम अपनी स्वतन्त्रता तो होगी। मेरे पास कुछ रुण्ये पहले के हैं, कुछ मुझे प्राविडेंट फण्ड के मिल जाएंगे। इतने में एक छोटी सी जगह पर मेरा काफी दिन गुजारा हो सकता है। मैं ऐसी जगह रहना चाहती हूं जहां यहां की ही गन्दगी न हो और लोग इस तरह की छोटी हरकतें न करते हीं। ठीक से जीने के लिए इन्सान को कम से कम इतना तो महसूस होना चाहिए कि उसके आसपास का वातावरण उजला और साफ है, और वह एक मेंढक की तरह गंदले पानी में नहीं जी रहा।"

"मगर तुम यह कैसे कह सकती हो कि जहां भी तुम जाकर रहोगी, वहां हर चीज वैसी ही होगी जैसी तुम चाहती हो? मैं तो समझता हूं कि इन्सान जहां भी चला जाए, अच्छी और बुरी दोनों तरह की चीजें उसे अपने आसपास मिलेंगी ही। तुम यहां के वातावरण से घबराकर कहीं और जाती हो, तो यह कैसे कहा जा सकता है कि वहां वा वातावरण भी तुम्हें ऐसा ही नहीं लगेगा? इसलिए मेरे ख्याल से नौकरी छोड़ने की बात तुम गलत सोचती हो। तुम यहीं रहो और अपना संगीत और चित्रकला का अभ्यास करती रहो। लोग जैसी बातें करते हैं, करने दो।"

पर मिस पाल की वितृष्णा इससे कम नहीं हुई। "तुम नहीं समझते, रणजीत," वह बोली, "यहां ऐसे लोगों के बीच और रहूंगी, तो मेरा दिमाग बिलकुल खोखला हो जाएगा। तुम नहीं जानते कि मैं

जो तुम्हारे लिए सुबह दूध और सब्जियां लेकर जाती रही हूं, उसे लेकर भी ये लोग क्या-क्या वातें करते रहे हैं। जो लोग अच्छे-से-अच्छे काम का ऐसा कमीना मतलब लेते हों उनके बीच आदमी रह ही कैसे सकता है ? मैंने यह सब बहुत दिन सह लिया है, अब और मुझसे नहीं सहा जाता। मैं सोच रही हूं जितनी जल्दी हो सके यहां से चली जाऊं। बस यही एक बात तय नहीं कर पा रही कि जाऊं कहां। अकेली होने से किसी अनजान जगह जाकर रहते डर लगता है। तुम जानते ही हो कि मैं.. ।" और बात बीच में छोड़कर वह उठ खड़ी हुई, "अच्छा, तुम्हारे लिए कुछ चाय- वाय तो बनाऊं। तुम अभी अस्पताल से निकलकर आए हो और मैं हूं कि अपनी ही बात किए जा रही हूं। तुम्हें अभी कुछ दिन घर पर आराम करना चाहिए। अभी से इस तरह चलना-फिरना ठीक नहीं।"

"मैं चाय नहीं पिऊंगा," मैंने कहा, "मैं तुम्हें कुछ समझा तो नहीं सकता, सिर्फ इतना कह सकता हूं कि तुम लोगों की बातों को जरूरत से ज्यादा महत्त्व दे रही हो। मेरा यह भी ख्याल है कि लोग वास्तव में उतने बुरे नहीं हैं जितना कि तुम उन्हें समझती हो। अगर तुम इस नजर से सोचो कि।"

"इस बात को रहने दो," मिस पाल ने मेरी बात बीच में काट दी, "मैं इन लोगों से दिल से नफरत करती हूं। तुम इन्हें इन्सान समझते हो? मुझे तो ऐमे लोगों से अपना पिकी ज्यादा अच्छा लगता है। यह उन सबसे कहीं ज्यादा सभ्य है।"

पिकी मिस पाल का छोटा-सा कुत्ता था। वह कुछ देर उसे गोदी में लिए उसके बालों पर हाथ फेरती रही। मैंने पहले भी कई बार देखा था कि वह उस कुत्ते को एक बच्चे की तरह प्यार करती है और उसे खाना खिलाकर बच्चों की तरह ही तौलिये से उसका मुंह पोंछती है। मैं कुछ देर बाद वहां से उठकर चला, तो मिस पाल पिकी को गोदी में लिए मुझे बाहर दरवाजे तक छोड़ने आई।

"अंकल को टा टा करो," वह पिकी की एक अगली टांग हाथ से हिलाती हुई बोली, "टा टा, टा टा !"

मैं लम्बी छुट्टी से वापस आया, तो मिस पाल त्यागपत्र देकर जा चुकी थी। वह अपने बारे में लोगों को इतना ही बताकर गई थी कि वह कुल्लू के किसी गांव में बसने जा रही है। बाकी बातें लोगों की कल्पना ने अपने-आप जोड़ दी थी।

बस व्यास के साथ-साथ मोड़ काट रही थी और मेरा मन हो रहा था कि लौट- कर रायसन चला जाऊं। मैं मनाली में दस दिन अकेला रहकर ऊब गया था, और मिस पाल थी कि कई महीनों से वहां रहती थी। मैं जानना चाहता था कि वह अकेली वहां कैसा महसूस करती है और नौकरी छोड़ने के बाद से उसने क्या-क्या कुछ कर डाला है। यूं एक अपरिचित स्थान पर किसी पुराने परिचित से मिलने और बात करने का भी अपना आकर्षण होता है। बस जब कुल्लू पहुंचकर रुकी, तो मैंने अपना सामान वहां उतरवा कर हिमाचल राज्य परिवहन के दफ्तर में रखवा दिया और रायसन के लिए वापसी की पहली बस पकड़ ली। बस ने पन्द्रह-वीस मिनट में मुझे रायसन के बाजार में उतार दिया। मैंने वहां एक दुकानदार से पूछा कि मिस पाल कहां रहती हैं।

"मिस पाल कौन है, भाई ?" दुकानदार ने अपने पास बैठे युवक से पूछा। "वह तो नहीं, वह कटे बालों वाली मिस ?" "हां-हां, वही होगी।"

दुकान में और भी चार-पांच व्यक्ति थे। उन सबकी आंखें मेरी तरफ घूम गई। मुझे लगा जैसे वे मन में यह तय करना चाह रहे हों कि कटे बालों वाली मिस के साथ मेरा क्या रिश्ता होगा।

"चलिए, मैं आपको उसके यहां छोड़ आता हूं," कहकर युवक दुकान से उतर आया। सड़क पर मेरे साथ चलते हुए उसने पूछा, "क्यों भाई साहब यह मिस क्या अकेली ही है या..?"

"हां अकेली ही है।"

कछ देर हम लोग चुप रहकर चलते रहे। फिर उसने पूछा, "आप उसके क्या लगते हैं ?"

मुझे समझ नहीं आया कि मैं उसको क्या उत्तर दूं। पल-भर सोचकर मैंने कहा, "मैं उसका रिश्तेदार नहीं हूं। उसे वैसे ही जानता हूं ।"

सड़क से बाईं तरफ थोड़ा ऊपर को जाकर हम लोग एक खुले मैदान में पहुंच गए। मैदान चारों तरफ से पेड़ों से घिरा था और बीच में पांच-छह जालीदार कॉटेज बने थे, जो बड़े-बड़े मुर्गी-खानों जैसे लगते थे। लड़का मुझे बताकर कि उनमें पहला कॉटेज मिस पाल का है, वहां से लौट गया। मैंने जाकर कॉटेज का दरवाजा खटखटाया।

"कौन है ?" अन्दर से मिस पाल की आवाज सुनाई दी।

"एक मेहमान है मिस, दरवाजा खोलो।"

"दरवाजा खुला है, आ जाइए।" मैंने दरवाजा धकेलकर खोल लिया और अन्दर चला गया। मिस पाल ने एक

चारपाई पर अपना गद्दा लगा रखा था और उसी तरह दो तकियों के बीच लेटी थी जैसे दिल्ली में अपने तख्त पर पर लेटी रहती थी। सिरहाने के पास एक खुली हुई पुस्तक रखी थी- बर्ट्रेण्ड रसेल की 'कांक्वेस्ट ऑफ हेपीनेस'। मैं देखकर तय नहीं कर सका कि वह पुस्तक पढ़ रही थी या लेटी हुई सिर्फ छत की तरफ देख रही थी। मुझे देखते ही वह चौंककर बैठ गई।

"अरे तुम..?"

"हां, मैं। तुमने सोचा भी नहीं होगा कि गया आदमी फिर वापस भी आ सकता है।" गए !" "बहुत अजीब आदमी हो तुम ! वापस आना था, तो उसी समय क्यों नहीं उतर "बजाय इसके कि शुक्रिया अदा करो जो सात मील जाकर वापस चला आया हूं।"

"शुक्रिया अदा करती अगर तुम उसी समय उतर जाते और मुझे बस में अपनी सीट ले लेने देते।"

मैंने ठहाका लगाया और बैठने के लिए जगह ढूंढ़ने लगा। वहां भी चारों तरफ वही बिखराव और अव्यवस्था थी जो दिल्ली में उसके घर दिखाई दिया करती थी। हर चीज हर दूसरी चीज की जगह काम में लाई जा रही थी। एक कुरसी ऊपर से नीचे तक मले कपड़ों से लदी थी। दूसरी पर कुछ रंग बिखरे थे और एक प्लेट रखी थी जिसमें बहुत-सी कीलें पड़ी थीं।

"बैठो, मैं झट से तुम्हारे लिए चाय बनाती हूं," मिस पाल व्यस्त होकर उठने लगी।

"अभी मुझसे बैठने को तो कहा नहीं, और चाय की फिक्र पहले से करने लगीं ?" मैंने कहा, "मुझे बैठने की जगह बता दो और चाय-वाय रहने दो। इस वक्त तुम्हारी 'बोहीमियन चाय' पीने का जरा मन नहीं है।"

"तो मत पियो। मुझे कौन भंझट करना अच्छा लगता है! बैठने की जगह मैं अभी बनाए देती हूं।" और कपड़े-अपड़े हटाकर उसने एक कुरसी खाली कर दी। बाईं तरफ एक बड़ी-सी मेज थी, पर उस पर भी इतनी चीजें पड़ी थीं कि कहीं कुहनी रखने तक की जगह नहीं थी। मैंने बैठकर टांगें फैलाने की कोशिश की तो पता चला कपड़ों के ढेर के नीचे मिस पाल ने अपने बनाए खाके रख रखे हैं। मिस पाल फिर से अपने बिस्तर में तकियों के सहारे बैठ गई थी। गद्दे पर उसने वही झीना रेशमी कपड़ा बिछा रखा था, जिसे देखकर मुझे चिढ़ हुआ करती थी। मेरा उस समय भी मन हुआ कि उस कपड़े को निकालकर फाड़ दूं या कहीं आग में झोंक दूं। मैंने सिगरेट सुलगाने के लिए मेज से दिया सलाई की डिबिया उठाई मगर खोलते ही वापस रख दी। डिबिया में दियासलाइयां नही थीं, गुलाबी-सा रंग भरा था। मैंने चारों तरफ नजर दौड़ाई, मगर और डिबिया कही दिखाई नहीं दी।

"दियासलाई किचन में होगी, मैं अभी लाती हूं," कहती हुई मिस पाल फिर उठी और कमरे से चली गई। मैं उतनी देर आसपास देखता रहा। मुझे फिर उस दिन की याद हो आई जिस दिन मैं मिस पाल के घर देर तक बैठा उससे बातें करता रहा था। पिकी से मिस पाल के 'टा टा' कराने की बात याद आने से मैं हंस दिया। तभी मिस पाल दियासलाई की डिबिया लिए आ गई। मेरा अकेले में हंसना शायद उसे बहुत अस्वाभाविक लगा। वह सहसा गम्भीर हो गई। "किसी ने कुछ पिला-विला दिया है क्या ? उसने मजाक और शिकायत के स्वर में कहा।

"मैं अपने इस तरह लौटकर आने की बात पर हंस रहा हूं।" और जैसे अपने को ही अपने झूठ का विश्वास दिलाने के लिए मैंने अपनी हंसी की नकल की ओर कहा, "मैं सोच भी नहीं सकता था कि इस अनजान जगह पर अचानक तुमसे भेंट हो जाएगी ? और तुम्हींने कहां सोचा होगा कि जो आदमी बस में आगे चला गया था, वह घण्टा-भर बाद तुम्हारे कमरे में बैठा तुमसे बात कर रहा होगा !"

और विश्वास करके कि मैंने अपने हंसने के कारण की व्याख्या कर दी है, मैंने पूछा, "तुम्हारा पिकी कहां है? यहां दिखाई नहीं दे रहा।"

मिस पाल पहले से भी गम्भीर हो गई। मुझे लगा कि उसका चेहरा अब काफी रूखा लगने लगा है। आंखों में लाली भर रही थी, जैसे कई रातों से वह ठीक से सोई न हो।

पिंकी को यहां आने के बाद एक रात सरदी लग गई थी," उसने अपनी उसांस दबाकर कहा, "मैंने उसे कितनी ही गरम चीजें खिलाई, पर वह दो दिन में चलता बना।" मैंने विषय बदल दिया। उससे शिकायत करने लगा कि वह जो अपने बारे में बिना किसी को ठीक बताए दिल्ली से चली आई, यह उसने ठीक नहीं किया। "दफ्तर में अब भी लोग मिस पाल की बात करके हंसते होंगे !" उसने ऐसे पूछा जैसे वह स्वयं उस मिस पाल से भिन्न हो, जिसके बारे में वह सवाल पूछ रही थी। पर उसकी आंखों में यह जानने की बहुत उत्सुकता भर रही थी कि मैं उसके सवाल का क्या जवाब देता हूं।

"लोगों की बातों को तुम इतना महत्त्व क्यों देती हो ?" मैंने कहा। "लोग वैसी बातें इसलिए करते हैं कि उनके जीवन में मनोरंजन के दूसरे साधन बहुत कम होते हैं। जब वह व्यक्ति चला जाता है, तो चार दिन में यह भूल जाते हैं कि संसार में उसका अस्तित्व था भी या नहीं।"

कहते-कहते मुझे एहसास हो आया कि मैंने यह कहकर गलती की है। मिस पाल मुझसे यही सुनना चाहती थी कि लोग अब भी उसके बारे में उसी तरह बात करते हैं और उसी तरह उसका मजाक उड़ाते हैं - यह विश्वास उसके लिए अपने वर्तमान को पार्थक समझने के लिए जरूरी था।

"हो सकता है तुम्हारे सामने बात न करते हों," मिस पाल बोली, "क्योंकि उन्हें पता है कि हम लोग अम्...अ... मित्र रहे हैं। नहीं

तो वे कमीने लोग बात करने हैं बाज आ सकते हैं ?"

अच्छा था कि मिस पाल ने मेरी बात पर विश्वास नहीं किया । उसने समझा कि मैं झूठमूठ उसे दिलासा देने की कोशिश कर रहा हूं। ""हो सकता है बात करते भी हों," मैंने कहा, "पर तुम अब उन लोगों की बात क्यों सोचनी हो ? कम-से-कम तुम्हारे लिए तो उन लोगों का अब अस्तित्व ही नहीं है।" "मेरे लिए उन लोगों का अस्तित्व कभी था ही नहीं," मिस पाल ने मुंह विचका दिया, "मैं उनमें से किसी को अपने पैर के अंगूठे के बराबर भी नहीं समझती थी।" आंखों से लग रहा था जैसे अब भी उन लोगों को अपने पास देख रही हो और उसे खेद हो कि वह ठीक से उनसे प्रतिशोध क्यों नहीं ले पा रही। "तुम्हें पता है कि रमेश का फिर लखनऊ ट्रांस कर हो गया है ?" मैंने बात बदल दी।

"अच्छा, मुझे पता नहीं था !"

पर उसने उस सम्बन्ध में और जानने की उत्सुकता प्रकट नहीं की। मैं फिर भी उसे रमेश के ट्रांसफर का किस्सा विस्तार से सुनाने लगा। मिस पाल 'हूं-हां' करती रही। पर यह साफ था कि वह अपने अन्दर ही कहीं खो गई है।

मैं रमेश की बात कह चुका, तो कुछ क्षण हम दोनों चुप रहे। फिर मिस पाल बोली, "देखो, मैं तुमसे सच कहती हूं रणजीत, मुझे वहां उन लोगों के बीच एक-एक पल काटना असम्भव लगता था। मुझे लगता था, मैं नरक में रहती हूं। तुम्हें पता ही है, मैं दफ्तर में किसी से बात करना भी पसन्द नहीं करती थी।"

मैं सुबह मनाली से बिना नाश्ता किए चला था, इसलिए मुझे भूख लग आई थी। मैंने बात को रोटी के प्रकरण पर ले आना उचित समझा। मैंने उससे पूछा कि उसने खाने की क्या व्यवस्था कर रखी है खुद बनाती है, या कोई नौकर रख रखा है।

"तुम्हें भूख तो नहीं लगी ?" मिस पाल अब दफ्तर के माहौल से बाहर निकल आई, "लगी हो, तो उधर मेरे साथ किचन में चलो। जो कुछ बना है, इस वक्त तो तुम्हें उसी में से थोड़ा-बहुत खा लेना होगा। शाम को मैं तुम्हें ठीक से बनाकर खिलाऊंगी। मुझे तुम्हारे आने का पता होता, तो मैं इस वक्त भी कुछ और चीज बना रखती। यहां बाजार में तो कुछ मिलता ही नहीं। किसी दिन अच्छी सब्जी मिल जाए, तो समझो बड़े भाग्य का दिन है। कोई दिन होता है जिस दिन एकाध अण्डा मिल जाता है। शाम को मैं तुम्हारे लिए मछली बनाऊंगी। यहां की ट्राउट बहुत अच्छी होती है। मगर मिलती बहुत मुश्किल से है।"

मुझे खुशी हुई कि मैंने सफलतापूर्वक बात का विषय बदल दिया है। मिस पाल बिस्तर से उठकर खड़ी हो गई थी। मैंने भी कुर्सी से उठते हुए कहा, "आओ, चलकर तुम्हारा रसोईघर तो देख लूं। इस समय मुझे कसकर भूख लगी है, इसलिए जो कुछ भी बना है वह मुझे ट्राउट से अच्छा लगेगा। शाम को मैं जोगिन्दरनगर पहुंच जाऊंगा।"

मिस पाल दरवाजे से बाहर निकलती हुई सहसा रुक गई।

"तुम्हें शाम को जोगिन्दरनगर ही पहुंचना है तो लौटकर क्यों आए थे ? यह बात तुम गांठ में बांध लो कि आज मैं तुम्हें यहां से नहीं जाने दूंगी। तुम्हें पता है इन तीन महीनों से तुम मेरे यहां पहले ही मेहमान आए हो ? मैं तुम्हें आज कैसे जाने दे सकती हूं?... तुम्हारे साथ कुछ सामान-आमान भी है या ऐसे ही चले आए थे ?" मैंने उसे बताया कि मैं अपना सामान हिमाचल राज्य परिवहन के दफ्तर में छोड़ आया हूं और उससे कह आया हूं कि दो घंटे में मैं लौट आऊंगा।

"मैं अभी पोस्टमास्टर से वहां टेलीफोन करा दूंगी। कल तक तुम्हारा सामान यहां ले आएंगे। तुम कम से कम एक सप्ताह यहां रहोगे। समझे ? मुझे पता होता कि हाल तुम मनाली में आए हुए हो तो मैं भी कुछ दिन के लिए वहां चली आती। आजकल तो मैं यहां "खैर तुम पहले उधर तो आओ, नहीं भूख के मारे ही यहां से भाग जाओगे।" मैं इस नई स्थिति के लिए तैयार नहीं था। उस सम्बन्ध में बाद में बात करने की सोचकर मैं उसके साथ रसोईघर में चला गया। रसोईघर में कमरे जितनी अराजकता नहीं थी, शायद इसलिए कि वहां सामान ही बहुत कम था। एक कपड़े की आराम कुर्सी थी, जो लगभग खाली ही थी उस पर सिर्फ नमक का एक डिब्बा रखा हुआ था। शायद मिस पाल उसपर बैठकर खाना बनाती थी। खाना बनाने का और सारा सामान एक टूटी हुई मेज पर रखा था। कुर्सी पर रखा हुआ डिब्बा उसने जल्दी से उठाकर मेज पर रख दिया और इस तरह मेरे बैठने के लिए जगह कर दी। फिर मिस पाल ने जल्दी-जल्दी स्टोव जलाया और सब्जी की पतीली उसपर रख दी। कलछी साफ नहीं थी, वह उसे साफ करने के लिए बाहर चली गई। लौटकर उसे कलछी को पोंछने के लिए कोई कपड़ा नहीं मिला। उसने अपनी कमीज से ही उसे पोंछ लिया और सब्जी को हिलाने लगी।

"दो आदमियों का खाना है भी या दोनों को ही भूखे रहना पड़ेगा ?" मैंने पूछा।

"खाना बहुत है," मिस पाल झुककर पतीली में देखती हुई बोली।

"क्या-क्या है ?"

मिस पाल कलछी से पतीली में टटोलकर देखने लगी।

"बहुत कुछ है। आलू भी हैं, बैंगन भी हैं और शायद शायद बीच में एकाध टींडा भी है। यह सब्जी मैंने परसों बनाई थी।"

"परसों ?" मैं ऐसे चौंक गया जैसे मेरा माथा सहसा किसी चीज से टकरा गया हो। मिस पाल कलछी चलाती रही।

"हर रोज तो नहीं बना पाती हूं," वह बोली। रोज बनाने लगूं तो बस खाना बनाने की ही हो रहूं। और अम् अ अपने अकेली के लिए रोज्ज बनाने का उत्साह भी तो नहीं होता। कई बार तो मैं सप्ताह-भर का खाना एक साथ बना लेती हूं और फिर निश्चिन्त होकर खाती रहती हूं। कहो तो तुम्हारे लिए मैं अभी ताजा बना दूं।"

"तो चपातियां भी क्या परसों की ही बना रखी हैं?" मैं अनायास कुर्सी से उठ खड़ा हुआ।

"आओ, इधर आकर देख लो, खा सकोगे या नहीं।" वह कोने में रखे हुए बेंत के सन्दूक के पास चली गई। मैं भी उसके पास पहुंच गया। मिस पाल ने सन्दूक का ढकना उठा दिया। सन्दूक में पच्चीस-तीस खुश्क चपातियां पड़ी थीं। सूखकर उन सबने कई तरह की आकृतियां धारण कर ली थीं। मैं सन्दूक के पास से आकर फिर कुर्सी पर बैठ गया।

"तुम्हारे लिए ताजा चपातियां बना देती हूं," मिस पाल एक अपराधी की तरह देखती हुई बोली।

"नहीं-नहीं, जो कुछ बना रखा है वही खाएंगे," मैंने कहा। मगर अपनी इस भलमनसाहत के लिए मेरा मन अन्दर-ही-अन्दर कुढ़ गया।

मिस पाल सन्दूक का ढक्कन बन्द करके स्टोव के। पास लौट गई।

"सब्जी तीन दिन से ज्यादा नहीं चलती," वह बोली, "बाद में मैं जैम, प्याज और नमक से काम चलाती हूं। यहां अलूचे बहुत मिल जाते हैं, इसलिए मैंने बहुत-सा अलूचे का जैम बना रखा है। खाकर देखो, अच्छा जैम है। ठहो, तुम्हें प्लेट देती हूं।"

वह फिर जल्दी से बाहर चली गई और कमरे से कीलोंवाली प्लेट खाली करके ले आई।

"गिलास में अम् अ", वह आकर बोली, "सरसों का तेल रखा है। पानी तुम प्याली में ही ले लोगे या..?"

ट्राउट मछली खाना खाते समय और खाना खा चुकने के बाद भी मिस पाल के दिमाग पर ट्राउट मछली की बात ही सवार रही। जैसे भी हो, शाम को वह ट्राउट मछली बनाएगी। उसके हठ की वजह से मैंने उससे कह दिया था कि मैं अगले दिन सुबह तक वहां रह जाऊंगा। मिस पाल ने आगे का फैसला अगले दिन पर छोड़ दिया था। उसे शाम के लिए कई और चीजों का इन्तजाम करना था, क्योंकि ट्राउट मछली आसानी से तो नहीं बन जाती। पहली चीज घी चाहिए था। डिब्बे में घी नाममात्र को ही था। प्याज और मसाला भी घर में नहीं था। मिट्टी का तेल भी चाहिए था। खाने के बाद हम लोग घूमने के लिए निकले तो पहले वह मुझे साथ बाजार में ले गई। हट वार के पास भी घी नहीं था। उसके लिए मिस पाल ने पोस्टमास्टर से अनुरोध किया कि वह अपने घर से उसे शाम के लिए आधा सेर घी भिजवा दे, अगले दिन कुल्लू से लाकर लौटा देगी। उससे उसने यह भी कहा कि वह अपने घर के थोड़े-से फ्रेंच बीन भी उतरवाकर उसे भेज दे, और कोई मछलीवाला उधर से गुजरे तो उसके लिए सेर-भर ट्राउट ले रखे।

"सब्बरवाल साहब, मैं आपको बहुत तकलीफ देती हूं," वह चलने से पहले सात-आठ बार उसे धन्यवाद देकर बोली, 'मगर देखिए, मेरे मेहमान आए हुए हैं, और यहां ट्राउट के अलावा कोई अच्छी चीज मिलती नहीं। देखती हूं, अगर बाली मुझे मिल जाए तो मैं उससे कहूंगी कि वह मुझे दरिया से एक मछली पकड़ दे। मगर बाली का कोई भरोसा नहीं। आप जरूर मेरे लिए ले रखिएगा। मैंने मिसेज एटकिन्सन को भी कहला दिया है। उन्होंने भी ले ली तो मैं आज और कल दोनों दिन बना लेंगी। ध्यान रखिएगा। कई बार मछलीवाला आवाज नहीं लगाता और ऐसे ही निकल जाता है।

बैंक यू। बैंक यू वेरी मच !" मेरे सामान के लिए उसने कुल्लू फोन भी करा दिया। अब सड़क पर चलती हुई वह सुबह के नाश्ते की बात करने लगी।

"रात को तो ट्राउट हो जाएगी, मगर सुबह नाश्ता क्या बनाया जाए? डबल रोटी यहां यहां नहीं मिलेगी, नहीं तो मैं तुम्हें शहद के टोस्ट ही बनाकर खिलाती। अच्छा खैर, देखो।"

सड़क पर खुली धूप फैली थी और भेड़ों और पशम के बकरों का रेवड़ हमारे आगे-आगे चल रहा था। साथ दो कुत्ते जीभ लपलपाते हुए पट्टेदारी करते जा रहे थे। सामने से एक जीप के आ जाने से रेवड़ में खलबली मच गई। बकरीवाले भेड़ों को पहाड़ की तरफ धकेलने लगे। एक भेड़ का बच्चा ढलान से फिसल गया और नीचे से सिर उठाकर मिमियाने लगा। किसी बकरीवाले का ध्यान उसकी तरफ नहीं गया तो मिस पाल सहसा परेशान हो उठी, "ए भाई, देखो वह बच्चा नीचे जा गिरा है। बकरी- वाले, एक बच्चा नीचे खाई में गिर गया है, उसे उठा लाओ। ए भाई !"

एक दिन पहले वर्षा हुई थी, इसलिए ब्यास खूब चढ़ा हुआ था। नुकीली चट्टानों से छित्तता और कटता हुआ पानी शोर करता हुआ बह रहा था। सामने दरिया पार करने का झूला था। झूले की चखियां घूम रही थीं, रस्सियां इकट्ठी हो रही थीं और झूला दो व्यक्तियों को लिए हुए इस पार से उस पार जा रहा था। सहसा भूले में बैठे हुए दोनों व्यक्ति 'ही-ही-ही-ही' करके हंसने लगे, जैसे किसी को चिढ़ा रहे

हों। फिर उनमें से एक ने जोर से छींक दिया। भूला उस पार पहुंच गया और वे व्यक्ति उसी तरह हंसते और छींकते हुए उससे उतर गए। भूला छोड़ दिया गया, और उसकी रस्सियां इस सिरे से उस सिरे तक आधी गोलाइयों में फैल गई। जो व्यक्ति उधर उतरे थे, वे उस किनारे से फिर एक बार जोर से हंसे। तभी भूला खींचनेवालों में एक लड़का मचान से उतरकर हमारे पास आ गया। वह ऐसे बात करने लगा जैसे अभी-अभी कोई दुर्घटना होकर हटी हो।

"मिस साहब," उसने कहा, यह वही सुदर्शन है, जिसने आपके कुत्ते को कुछ खिलाया था। यह अब भी शरारत करने से बाज नहीं आता।"

उन व्यक्तियों के हंसने और छींकने का मिस पाल पर उतना असर नहीं हुआ था जितना उस लड़के की बात का हुआ था। उसका चेहरा एकदम से उत्तर गया और

आबाज खुश्क हो गई।

'यह उधर के गांव का आदमी है न?" उसने पूछा।

"हां, मिस साहव !"

"तुम पोस्टमास्टर को बताना। वे अपने-आप इसे ठीक कर लेंगे।"

"मिस साहब, यह हमसे कहता है कि यह मिस साहब...!"

"तुम इस वक्त जाओ अपना काम करो," मिस पाल उसे झिड़ककर बोली "पोस्टमास्टर से कहना वे इसे एक दिन में ठीक कर देंगे।"

"मगर मिस साहब !"

"जाओ, फिर कभी उधर आकर बात करना।"

लड़के की समझ में नहीं आया कि मिस साहब से बात करने में उस समय उससे क्या अपराध हुआ है। वह सिर लटकाए हुए चुपचाप वहां से लौट गया।

कुछ देर हम लोग वहीं रुके रहे। मिस पाल जैसे थकी हुई-सी सड़क के किनारे एक बड़े-से पत्थर पर बठ गई। मैं दरिया के उस पार पहाड़ की चोटी पर उगे हुए वृक्षों की लम्बी पंक्ति को देखने लगा, जो नील आकाश और गुब्बारे जैसे सफेद बादलों के बीच खिची हुई लकीर-सी लगती थी। दरिया के दोनों तरफ पुल के सलेटी खम्भे खड़े थे, जिनपर अभी पुल नहीं बना था। खम्भों के आसपास से झड़कर थोड़ी-थोड़ी मिट्टी दरिया में गिर रही थी। मैंने उधर से आंखें हटाकर मिस पाल की तरफ देखा। मिस पाल मेरी तरफ देख रही थी। शायद वह जानना चाहती थी कि भूलेवाले लड़के की बात का मेरे मन पर क्या प्रभाव पड़ा है।

"तो आगे चलें?" मुझसे आंखें मिलते ही उसने पूछा।

"हां चलो।"

मिस पाल उठ खड़ी हुई। उसकी सांस कुछ-कुछ फूल रही थी। वह चलती हुई मुझे बताने लगी कि वहां के लोगों में कितनी तरह के अन्ध-विश्वास है। जब पिकी बीमार हुआ तो वहां के लोगों ने सोचा था कि किसी ने उसे कुछ खिला-विला दिया है। ये अनपढ़ लोग हैं। मैंने इनकी बातों का विरोध भी नहीं किया। ये लोग अपने अन्धविश्वास एक लगेंगे !" दिन में थोड़े ही छोड़ सकते हैं! इस चीज में जाने अभी कितने बरस और रास्ते में चलते हुए वह बार-बार मेरी तरफ देखती रही कि मुझे उसकी बात पर विश्वास हुआ है या नहीं। मैंने सड़क से एक छोटा-सा पत्थर उठा लिया था और चुपचाप उसे उछालने लगा था। काफी देर तक हम लोग खामोश चलते रहे। वह खामोशी मुझे अस्वाभाविक लगने लगी तो मैंने मिस पाल से वापस घर चलने का प्रस्ताव किया।

"चलो, चलकर तुम्हारी बनाई हुई नई तस्वीरें ही देखी जाएं," मैंने कहा, "इन तीन-चार महीनों में तो तुमने काफी काम कर लिया होगा।"

"पहले घर चलकर एक-एक प्याली चाय पीते हैं," मिस पाल बोली। "सचमुच इस समय मैं चाय की गरम प्याली के लिए जिन्दगी की कोई भी चीज़ कुर्बान कर सकती हूं। मेरा तो मन था कि घर से चलने से पहले ही एक-एक प्याली पी लेते, मगर फिर मैंने कहा कि पोस्टमास्टर से कहने में देर हो जाएगी तो मछलीवाला निकल जाएगा।"

इस बात ने मेरे मन को थोड़ा गुदगुदा दिया कि तीन महीने में आया हुआ पहला मेहमान उस समय मिस पाल के लिए अपनी तस्वीरों से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

लौटकर कॉटेज में पहुंचते ही मिस पाल चाय बनाने में व्यस्त हो गई। वह आते हुए काफी थक गई थी, क्योंकि जरा-सी चढ़ाई चढ़ने में ही उसकी सांस फूलने लगती थी, मगर वह जरा देर भी सुस्ताने के लिए नहीं रुकी। चाय के लिए उसकी यह व्यस्तता मुझे बहुत अस्वाभाविक लगी, शायद इसलिए कि मुझे खुद चाय की जरूरत महसूस नहीं हो रही थी। मिस पाल इस तरह चम्मचों और प्यालियों को ढूंढ़ने के लिए परेशान हो रही थी, जैसे उसके दस मेहमान चाय का इन्तजार कर रहे हों और उसे समझ न आ रहा हो कि कैसे जल्दी से सारा इन्तज़ाम करे।

मैं घूमकर कमरे में और बरामदे में लगी हुई तसवीरों को

देखने लगा। जिस- जिस तसवीर पर भी मेरी नजर पड़ी, मुझे लगा वह मेरी पहले की देखी हुई है । कुछ बड़ी तसवीरें थीं जो मिस पाल पंजाब के एक मेले से बनाकर लाई थी । वह अजीब-अजीब-से चेहरे थे, जिनपर हम लोग एक बार फब्तियां कसते रहे थे। जाने क्यों, मिस पाल अपने चित्रों के लिए सदा ऐसे ही चेहरे चुनती थी जो किसी न किसी रूप में विकृत हों ! मैंने सारा कमरा और बरामदा घूम लिया। दो-एक अधूरी तसवीरों को छोड़कर मुझे एक भी नई चीज़ दिखाई नहीं दी मैंने रसोईघर में जाकर मिस पाल से पूछा कि उसकी नई तस्वीरें कहां हैं।

"अजी छोड़ो भी," मिस पाल प्यालियां धोती हुई बोली, "चाय की प्याली पीकर हम लोग ऊपर की तरफ घूमने चलते हैं। ऊपर एक बहुत पुराना मन्दिर है । वहां का पुजारी तुम्हें ऐसे-ऐसे किस्से सुनाएगा कि तुम सुनकर हैरान रह जाओगे। एक दिन वह बता रहा था कि यहां कुछ मन्दिर ऐसे हैं, जहां लोग पहले तो देवता से वर्षा के लिए प्रार्थना करते हैं, मगर बाद में अगर देवता वर्षा नहीं देता तो उसे हिडिम्बा के मन्दिर में ले जाकर रस्सी से लटका देते हैं। है नहीं मजेदार बात ? जो देवता तुम्हारा काम न करे, उसे फांसी लगा दो । मैं कहती हूं रणजीत, यहां लोगों में इतने अन्धविश्वास हैं, इतने अन्धविश्वास हैं कि क्या कहा जाए ! ये लोग अभी तक जैसे कौरवों-पाण्डवों के जमाने में ही जीते हैं, आज के ज़माने से इनका कोई सम्बन्ध ही नहीं है।" और एक बार उड़ती नजर से मुझे देखकर वह चीनी ढूंढ़ने में व्यस्त हो गई। "अरे चीनी कहां चली गई? अभी हाथ में थी, और अभी न जाने कहां रख दी ? देखो, कैसी भुलक्कड़ हो गई हूं! मेरा तो बस एक ही इलाज है कि कोई हाथ में छड़ी लेकर मुझे ठीक करे। यह भी कोई रहने का ढंग है जैसे मैं रहती हूं ?"

"तुमने यहां के कुछ लैंडस्केप नहीं बनाए ?" मैंने पूछा। "तस्वीरें तो बहुत-सी शुरू कर रखी हैं, पर अभी तक पूरी नहीं कर सकी,"

मिस पाल जैसे उस मुश्किल स्थिति से बचने का प्रयत्न करती हुई बोली, "अब किसी दिन लगकर सबकी-सव तसवीरें पूरी करूंगी। तारपीन का तेल भी खत्म हो चुका है, किसी दिन जाकर लाना है। कई दिनों से सोच रही थी कि मण्डी जाकर कैनवस और रंग भी ले आऊं, पर यूं ही आलस कर जाती हूं। कुछ ड्राइंग पेपर भी जिल्द कराने हैं। अब जाऊंगी किसी दिन और सारे काम एक साथ ही कर आऊंगी।"

बात करते हुए मिस पाल की आंखें झुकी जा रही थीं, जैसे वह अपने ही सामने किसी चीज के लिए लिए अपन अपराधी हो, और लगातार बात करके अपने अपराध के अनुभव को छिपाना चाहती हो। मैं चुप रहकर उसे चाय में चीनी मिलाते देखता रहा। उसे देखते हुए उस समय मेरे मन में कुछ वैसी उदासी भरने लगी जैसी एक निर्जन समुद्र-तट पर या ऊंची पहाड़ियों से घिरी हुई किसी एकान्त पथरीली घाटी में जाकर अनायास मन में भर जाती है।

"कल से एक तो मैं अपने घर को ठीक करूंगी," मिस पाल क्षण-भर बाद फिर उसी तरह बिना रुके बात करने लगी "एक तो घर का सारा सामान ठीक ढंग से लगाना है। तुम्हें पता है, मैंने कितने चाव से दिल्ली में अपने कमरे के लिए जाली के पर्दे बनवाए थे ? वे पर्दे यहां ज्यों के त्यों बक्स में बन्द पड़े हैं; मेरा लगाने को मन ही नहीं हुआ। मैं कल ही तरखान से कहकर पर्दों के लिए चौखटे बनवाऊंगी। खाने-पीने का थोड़ा-बहुत सामान भी घर में रखना ही चाहिए; विस्कुट, मक्खन, डबलरोटी और अचार का होना तो बहुत ही जरूरी है। जो चीजें कुल्लू से मिल जाती हैं वे तो मैं लाकर रख ही सकती हूं।" तारपीन का तेल भी मुझे कुल्लू से ही मिल जाएगा।"

उसने चाय की प्याली मेरे हाथ में दे दी तो भी मेरे मुंह से कोई बात नहीं निकली, और मैं चुपचाप छोटे-छोटे घूंट भरने लगा। मेरे मन को उस समय एक तरह की जड़ता ने घेर लिया था। कहां मिस पाल के बारे में दिल्ली के लोगों से सुनी हुई वे सब बातें और कहां उसके जीवन की यह एकान्त विडम्बना !

ट्राउट मछली ! मिस पाल की सारी परेशानी के बावजूद उस दिन उसे ट्राउट नहीं मिल सकी। पोस्टमास्टर ने बताया कि मछलीवाला उस दिन आया ही नहीं। मिस पाल के बहुत-बहुत खुशामद करने पर भी मकान-मालकिन का चौकीदार बाली दरिया से मछली पकड़ने के लिए राजी नहीं हुआ। उसने कहा कि वह अपनी छड़ी पालिश कर रहा है, उसे फुरसत नहीं है। मिसेज एटकिन्सन के बच्चों ने एक मछली पकड़ी थी। मगर उसके पति ने उस दिन खासतौर पर मछली की कतलियों के लिए कहा था, इसलिए वह अपनी मछली मिस पाल को नहीं दे सकती थी। हां, पोस्टमास्टर ने फ्रेंच बीन जरूर भेज दिए। चावल और सूखे फ्रेंच बीन! रात की रोटी के लिए मिस पाल का सारा उत्साह ठण्डा पड़ गया। खाना बनाने में उसका मन भी नहीं लगा, जिससे चावल थोड़ा नीचे लग गए। खाना खाते समय मिस पाल बस अफसोस ही प्रकट करती रही।

"मैं बहुत बदकिस्मत हूं रणजीत, हर लिहाज से मैं बहुत ही बदकिस्मत हूं,"

खाना खाने के बाद हम लोग बाहर मैदान में कुर्सियां निकालकर बैठ गए तो उसने कहा। वह सिर के पीछे हाथ रखे आकाश की ओर देख रही थी। बारहीं या तेरहीं की रात होने से आकाश में तीन तरफ खुली चांदनी फैली थी। ब्यास की आवाज वातावरण में एक गूज पैदा कर रही थी। वृक्षों की सरसराहट के अतिरिक्त मैदान की घास से

भी एक धीमी-सी सरसराहट निकलती प्रतीत होती थी। हवा तेज्ज थी और सामने पहाड़ के पीछे से उठता हुआ बादल धीरे-धीरे चांद की तरफ सरक रहा था। "क्या बात है मिस पाल, तुम इस तरह गुम-सुम क्यों हो रही हो ?" मैंने कहा, "चावल थोड़े खराब हो गए, तो इसमें इस तरह उदास होने की क्या बात है !"

मिस पाल सामने पहाड़ की धुंधली रेखा को देखती रही, जैसे उसमें कोई चीज खोज रही हो।

"मैं सोचती हूं रणजीत कि मेरे जीने का कोई भी अर्थ नहीं है," उसने कहा। और वह मुझे अपने आरम्भिक जीवन की कहानी सुनाने लगी। उसे बहुत बड़ी शिकायत थी कि आरम्भ में अपने घर में भी उसे जरा सुख नहीं मिला, यहां तक कि अपने माता-पिता का स्नेह भी उसे नहीं मिला। उसकी मां ने उसकी अपनी मां ने - भी उसे प्यार नहीं किया। इसी वजह से पन्द्रह साल पहले वह अपना घर छोड़कर नौकरी करने के लिए निकल आई थी। "सोचो, मां को मेरा घर में होना ही बुरा लगता था। पिताजी को मेरे संगीत सीखने से चिढ़ थी। वे कहा करते थे कि मेरा घर-घर है रंड़ीखाना नहीं। भाइयों का जो थोड़ा-बहुत प्यार था, वह भी भाभियों के आने के बाद छिन गया। मैंने आज तक कितनी-कितनी मुश्किल से अपनी अम् अपवित्रता को बचाया है. यह मैं ही जानती हूं। तुम सोच सकते हो कि एक अकेली लड़की के लिए यह कितना मुश्किल होता है। मेरा लाहौर की तरफ घूमने जाने को मन था; वहां की कुल तसवीरें बनाना चाहती थी, मगर मैं वहां नहीं गई, क्योंकि मैं सोचती थी कि मर्द की पशु-शक्ति के सामने अम् अ ... मैं अकेली क्या कर सकूंगी। फिर, तुम्हें पता है कि डिपार्टमेंट के लोग वहां मेरे बारे में कैसी बुरी-बुरी बातें किया करते थे। इसीलिए मैं कहती हूं कि मुझे वहां के एक-एक आदमी से नफरत है। वे तुम्हारे बुखारिया और मिर्जा और जोरावरसिंह। मैं तो कभी ऐसे लोगों के साथ बैठकर एक प्याली चाय भी पीना पसन्द नहीं करती थी। तुम्हें याद है, एक बार जब जोरावरसिंह ने मुझसे कहा था..."

और फिर वह दफ्तर के जीवन की कई छोटी-छोटी घटनाएं दोहराने लगी। जब मैंने देखा कि वह फिर से उसी वातावरण में जाकर खामखाह अपना गुस्सा भड़का रही है तो मैंने उससे फिर कहा कि वह अब दफ्तर के लोगों के बारे में न सोचे, अपने संगीत और अपने चित्रों की बात ही सोचे।

"तुम यहां रहकर कुछ अच्छी-अच्छी चीजें बना लो, फिर दिल्ली आकर अपनी प्रदर्शनी करना।" मैंने कहा, "जब लोग तुम्हारी चीजें देखेंगे और तुम्हारा नाम सुनेंगे तो अपने-आप तुम्हारी कद्र करेंगे।"

"न, मैं प्रदर्शनी-अदर्शनी के किसी चक्कर में नहीं पड़ूगी।" मिस पाल उसी तरह सामने की तरफ देखती हुई बोली, "तुम जानते ही हो इन सब चीजों में कितनी पालिटिक्स चलती है। मैं उस पालिटिक्स में नहीं पड़ना चाहती। मेरे पास अभी तीन- चार हजार रुपये हैं, जिनसे मेरा काफी दिन गुजारा चल जाएगा। जब ये रुपये चुक जाएंगे, तो..." और वह जैसे कुछ सोचती हुई चुप कर गई। मैं आगे की बात सुनने के लिए बहुत उत्सुक था। मगर मिस पाल कुछ देर बाद कंधे हिलाकर बोली, " तो भी कुछ न कुछ हो ही जाएगा। अभी वह वक्त आए तो सही।"

बादल ऊंचा उठ रहा था और वातावरण में ठंडक बढ़ती जा रही थी। जंगल की तरफ से आती हुई हवा की गूंज शरीर में बार-बार सिहरन भर देती थी। साथ के कॉटेज में रेडियो पर पश्चिमी संगीत चल रहा था। उससे आगे के कॉटेज में लोग खिलखिलाकर हंस रहे थे। मिस पाल अपनी आंखें मूंदे हुए मुझे बताने लगी कि होशियारपुर में उसने भृगुसंहिता से अपनी कुण्डली निकलवाई थी। उस कुण्डली के फल के अनुसार इस जन्म में उसपर यह शाप है कि उसे कोई सुख नहीं मिल सकता- न धन का, न ख्याति का, न प्यार का। इसका कारण भी भृगुसंहिता में दिया था। अपने पिछले जन्म में वह सुन्दर लड़की थी और नृत्य-संगीत आदि कलाओं में बहुत पटु थी। उसके पिता बहुत-धनी थे और वह उनकी अकेली संतान थी। जिस व्यक्ति से उसका व्याह हुआ वह बहुत सुन्दर और धनी था। "मगर मुझे अपनी सुन्दरता और अपनी कला का बहुत मान था, इसलिए मैंने अपने पति का आदर नहीं किया। कुछ ही दिनों में वह बेचारा दुःखी होकर इस संसार से चल बसा। इसीलिए मुझपर अब यह शाप है कि इस जन्म में मुझे सुख नहीं मिल सकता।"

मैं चुपचाप उसे देखता रहा। अभी दिन में ही वह वहां के लोगों के अंधविश्वासों की चर्चा करती हुई उनका मजाक उड़ा रही थी। सहसा मिस पाल भी बोलते-बोलते चुप कर गई और उसकी आंखें मेरे चेहरे पर स्थिर हो गई। उसके लिपस्टिक से रंगे हुए ओठों की तह में जैसे उस समय कोई चीज कांप रही थी। काफी देर हम लोग चुप बैठे रहे। बादल ने चांद को छा लिया था और चारों तरफ गहरा अंधेरा हो रहा था। सहसा साथ के कॉटेज की बत्ती भी बुझ गई, जिससे अंधेरा और भी गहरा लगने लगा।

मिस पाल उसी तरह मेरी तरफ देख रही थी। मुझे महसूस होने लगा कि मेरे आसपास की हवा कुछ भारी हो रही है। मैं सहसा कुरसी पीछे सरकाकर उठ खड़ा हुआ। "मेरा खयाल है, अब रात काफी हो गई है," मैंने कहा, "इसलिए अब चलकर सो रहा जाए। और बातें अब सुबह होंगी।"

"हां-हां," मिस पाल भी अपनी कुर्सी से उठती हुई बोली,

"मैं अभी चलकर बिस्तर बिछा देती हूं। तुम बताओ, तुम्हारा बिस्तर बरामदे में बिछा दूं या..." "हां, बरामदे में ही बिछा दो। अन्दर काफी गरमी होगी।"

"देख लो, रात को ठंड हो जाएगी।"

'कोई बात नहीं, बरामदे में हवा आती रहेगी तो अच्छा लगेगा।"

और बरामदे में लेटे हुए मैं देर तक जाली के बाहर देखता रहा। बादल पूरे आकाश में छा गया था और दरिया का शब्द बहुत पास आया-सा लगता था। जाली से लगा हुआ मत्र.ड़ी का जाला हवा से हिल रहा था। पास ही कोई चूहा कोई चीज कुतर

रहा था। अन्दर कमरे से बार-बार करवट बदलने की आवाज सुनाई दे जाती थी। "रणजीत !" अन्दर से आवाज आई तो मेरे सारे शरीर में एक सिहरन भर गई।

"मिस पाल !"

"सरदी तो नहीं लग रही ?"

"नहीं, बल्कि हवा है, इसलिए अच्छा लग रहा है।" और तभी टप्-टप्-टप्-टप् मोटी-मोटी बूंदें पड़ने लगीं। पानी की बौछार मेरे बिस्तर पर आने लगी तो मैंने करवट बदली। बरामदे की बत्ती मैंने जलती रहने दी थी, इसलिए कई चीजें इधर-उधर बिखरी नजर आ रही थीं। बिस्तर बिछाते समय मिस पाल को घर की काफी उथल-पुथल करनी पड़ी थी। मेरी चारपाई के पास ही एक तिपाई औंधी पड़ी थी और उससे जरा आगे तसवीरों के कुछ एक फ्रेम रास्ते में गिरे थे। सामने के कोने में मिस पाल के ब्रश और कपड़े एक ढेर में उलझे हुए पड़े थे। अन्दर की चारपाई चिरमिराई और लकड़ी के फर्श पर पैरों की धप्-धप् आवाज सुनाई देने लगी। फिर सुराही से बुल्लू में पानी पीने की आवाज आने लगी।

रणजीत !"

"मिस पाल !"

"प्यास तो नहीं लगी ?"

"नहीं।"

"अच्छा, सो जाओ।"

कुछ देर मुझे लगता रहा जैसे मेरे आस-पास एक बहुत तेज सांस चल रही है जो धीरे-धीरे दबे पैरों, सारे वातावरण पर अधिकार करती जा रही है, और आसपास की हर चीज अपने पर उसका दवाव महसूस कर रही है। पानी की बौछार कुछ धीमी पड़ने लगी तो मैंने फिर से जाली की तरफ करवट बदल ली और पहले की तरह ही बाहर देखने लगा। तभी पास ही झन्न से किसी चीज के गिरने की आवाज सुनाई दी।

"क्या गिरा है रणजीत ?" अन्दर से आवाज आई।

"पता नहीं, शायद किसी चूहे ने कुछ गिरा दिया है।"

"सचमुच मैं यहां चूहों से बहुत तंग आ गई हूं।"

मैं चुप रहा। अन्दर की चारपाई फिर चिरमिराई।

"अच्छा, सो जाओ !"

सारी रात पानी पड़ता रहा। सुबह-सुबह, वर्षा थम गई, मगर आकाश साफ नहीं हुआ। सुबह उठकर चाय के समय तक मेरी मिस पाल से खास बात नहीं हुई। चाय पीते समय भी मिस पाल अधूरे-अधूरे टुकड़ों में ही बात करती रही। मैंने उससे कहा कि मैं अब पहली बस से चला जाऊंगा तो उसने एक बार भी मुझसे रुकने के लिए आग्रह नहीं किया। यूं साधारण बातचीत में भी मिस पाल काफी तकल्लुफ बरत रही थी, जैसे किसी बिलकुल अपरिचित व्यक्ति से बात कर रही हो। मुझे उसका सारा व्यवहार बहुत अस्वाभाविक लग रहा था। वह जैसे वात न करने के लिए ही अपने को छोटे-छोटे कामों में व्यस्त रख रही थी। मैंने दो-एक बार उससे हल्के-से मजाक करने का भी प्रयत्न किया जिससे तनाव हट जाए और मैं उससे ठीक से विदा लेकर जा सकूं, मगर मिस पाल के चेहरे पर हल्की-सी मुस्कराहट भी नहीं आई।

"अच्छा तो मिस पाल, अब चलने की बात की जाए," आखिर मैंने कहा, "तुम कल कह रही थीं कि तुम भी कुल्लू तक साथ ही चलोगी। तो अच्छा होगा कि तुम आज ही वहां से अपना सारा सामान भी ले आओ। बाद में तुम फिर आलस कर जाओगी।" "नहीं, मैं आलस नहीं करूंगी," मिल पाल बोली, "किसी दिन जाकर जो-जो कुछ लाना है सव ले आऊंगी।"

और फिर बरामदे में बिखरे हुए कपड़ों को बिना मतलब ही उठाकर इधर से उधर रखते हुए उसने कहा, "आज बरसात का दिन है, इसलिए आज नहीं जाऊंगी। कल या परसों किसी समय देखूंगी। लाने के लिए कितनी ही चीजें हैं, इसलिए अच्छी तरह सब सोचकर जाना चाहिए। आज घिरा हुआ दिन है, इसलिए आज नहीं..।"

"घिरा हुआ दिन है तो क्या घर का सामान नहीं आएगा ?" मैंने अपने आग्रह से उसे सुलझाने की चेष्टा करते हुए कहा, "तुम मुझे बताओ कि घी और तारपीन के डिब्बे कहां रखे हैं। कोई बड़ा थैला हो तो वह भी साथ में ले लो। फुटकर चीजें उसमें आ जाएंगी। यहां से जो भी बस मिलेगी, उसमें हम लोग साथ-साथ चले चलेंगे। मैं कुल्लू से बारह बजे की बस पकड़कर आगे चला जाऊंगा। तुम्हें तो उधर से लौटने के लिए सारा दिन बसें मिलती रहेंगी।"

मैं जान-बूझकर इस तरह बात कर रहा था जैसे मिस पाल का साथ चलना निश्चित ही हो, हालांकि मैं जानता था कि वह टालने का पूरा प्रयत्न करेगी। मिस पाल इधर से उधर जाती हुई ढूंढ-ढूंढ़कर अपने करने के लिए काम निकाल रही थी। उसके चेहरे से लग रहा था जैसे मेरी बातें उसे बिलकुल व्यर्थ लग रही हों और वह जल्द- अज-जल्द अपने एकान्त में लौट जाना चाहती हो।

"देखो, कभी-कभी यहां बस में एक भी सीट नहीं मिलती," उसने कहा, "दो-दो सीटें मिलना तो बहुत ही मुश्किल है। तुम मेरी बजह से अपनी बारह बजे की बस क्यों मिस करते हो ? तुम चले जाओ, मैं कल या परसों जाकर जो कुछ भी मुझे लाना है ले आऊंगी।" और जैसे सहसा कोई काम याद आ जाने से वह जल्दी से अपना चेहरा दूसरी तरफ हटाए हुए कमरे में चली गई। कुछ देर में वह पेटीकोट लिए हुए कमरे से बाहर आई। पेटीकोट को टिड्डियां काट गई थीं। उसने जैसे नुकसान की परेशानी की वजह से ही चेहरा सख्त किए हुए उसे एक तरफ कोने में फेंक दिया और किसी तरह कठिनाई से बोली, "मैंने तुमसे कह दिया है कि तुम चले जाओ। तुम्हें पता है कि मुझे तो अकेली को ही दो सीटें चाहिए।"

"ये सब बहाने तुम रहने दो," मैंने कहा। "एक बस में जगह नहीं मिलेगी तो दूसरी में मिल जाएगी। तुम इधर आकर मुझे बताओ कि वे डिब्बे कहां रखे हैं।" मिस पाल शायद ज्यादां वात नहीं करना चाहती थी, इसलिए उसने मेरी बात का विरोध नहीं किया।

"अच्छा तुम बैठो, मैं अभी ढूंढ़ती हूं," उसने कहा और आंखें बचाती हुई रसोई- घर में चली गई।

पहली बस में सचमुच हम लोगों को जगह नहीं मिली। ड्राइवर ने बस वहां रोकी ही नहीं, और हाथ के इशारे से कह दिया कि बस में जगह नहीं है। दूसरी बस में भी जगह नहीं थी, मगर किसी तरह कह-कहाकर हमने उसमें अपने लिए जगह बना ली। मगर हम कुल्लू काफी देर से पहुंचे, क्योंकि रात की बरसात से एक जगह सड़क टूट गई थी और उसकी मरम्मत की जा रही थी। हमारे कुल्लू पहुंचने के लगभग साथ ही बारह बजे का वस भी मनाली से आ पहुंची। पौने बारह हो चुके थे। मैंने अन्दर जाकर अपने सामान का पता किया, फिर बाहर मिस पाल के पास आ गया। मिस पाल ने खाली डिब्बे अपने दोनों हाथों में संभाल रखे थे। मैं डिब्बे उसके हाथों से लेने लगा तो उसने अपने हाथ पीछे हटा लिए।

"चलो, पहले बाजार में चलकर तुम्हारा सामान खरीद लें," मैंने कहा। "अब सामान की बात रहने दो," उसने कहा। "तुम्हारी बस आ गई है, तुम इसमें चले जाओ। सामान तो मैं किसी भी समय खरीद लूंगी। तुम्हें इसके बाद फिर किसी बस में जगह नहीं मिलेगी। दो बजे की बस मनाली से ही भरी हुई आती है। तुम्हारा एक दिन और यहां खराब होगा।"

"दिन खराब होने की क्या बात है," मैंने कहा। "पहले चलकर बाजार से सामान खरीद लेते हैं। अगर आज सचमुच किसी बस में जगह नहीं मिली तो मैं तुम्हारे साथ लौट चलूंगा और कल किसी बस से चला जाऊंगा। मुझे वापस पहुंचने की ऐसी कोई जल्दी नहीं है।"

"नहीं तुम चले जाओ," मिस पास हठ के साथ बोली, "अपने लिए खामखाह मैं तुम्हें क्यों परेशान करूं ? अपना सामान तो मैं जब कभी भी ले लूंगी।" "मगर मुझे लगता है कि आज तुम ये डिब्बे इसी तरह लिए हुए ही लौट

जाओगी।" "अरे नहीं," मिस पाल की आंखें उमड़ आईं और वह अपने आंसओं को रोकने के लिए दूसरी तरफ देखने लगी, "तुम समझते हो मैं अपने शरीर की देखभाल ही नहीं करती। अगर न करती तो यह इतना शरीर ऐसे ही होता?... लाओ पैसे दो मैं तुम्हारा

टिकट ले आती हूं। देर करोगे तो इस बस में भी जगह नहीं मिलेगी।" "तुम इस तरह जिद क्यों करती हो मिस पाल ? मुझे जाने की सचमुच ऐसी कोई जल्दी नहीं है।" मैंने कहा।

"मैंने तुमसे कहा है, तुम पैसे निकालो, मैं तुम्हारा टिकट ले आ। मगर नहीं, तुम रहने दो। कल का तुम्हारा टिकट मेरी वजह से खराब हुआ था। मैं फिर तुमसे पैसे किसलिए मांग रही हूं?"

और वह डिब्बे वहीं रखकर झटपट टिकटघर की तरफ बढ़ गई।

"ठहरो, मिस पाल," मैंने असमंजस में अपना बटुआ जेब से निकाल लिया।

"तुम रुको, मैं अभी आ रही हूं। तुम उतनी देर में अपना सामान निकलवाकर ऊपर रखवाओ।

मेरा मन उस समय न जाने कैसा हो रहा था, फिर भी मैंने अन्दर से अपना सामान निकलवाया और बस की छत पर रखवा दिया। मिस पाल तब तक टिकटघर के बाहर ही खड़ी थी। शनिवार होने के कारण उस दिन स्कूल में जल्दी छुट्टी हो गई थी और बहुत-से बच्चे बस्ते लटकाए सुलतानपुर की पहाड़ी से नीचे आ रहे थे। कई बच्चे बस की सवारियों को देखने के लिए वहां आसपास जमा हो रहे थे। मिस पाल उस समय प्याजी रंग की सलवार-कमीज पहने थी और ऊपर काला दुपट्टा लिए थी। उन कपड़ों की वजह से उसका शरीर पीछे से और भी फैला हुआ लगता था। बच्चे एक-दूसरे से आगे होते हुए

टिकटघर के नजदीक जाने लगे। मिस पाल टिकटघर की खिड़की पर झुकी हुई थी। एक लड़के ने धीरे से आवाज लगाई, "कमाल है भई कमाल है !"

इस पर आसपास खड़े बहुत-से बच्चे हंस दिए। मुझे लगा जैसे किसीने मेरे भारी मन पर एक और बड़ा पत्थर डाल दिया हो। बच्चे सबके सब टिकटघर के आस- पास जमा हो गए थे और आपस में खुसर-पुसर कर रहे थे। मैं उनसे कुछ कह भी नहीं सकता था, क्योंकि उससे मिस पाल का ध्यान खामखाह उनकी तरफ चला जाता। मैं उधर से अपना ध्यान हटाकर दरिया की तरफ से आते हुए लोगों को देखने लगा। फिर भी बच्चों की खुसर-पुसर मेरे कानों में पड़ती रही। दो लड़कियां बहुत धीरे-धीरे आपस में बात कर रही थीं, "मर्द है।"

"नहीं, औरत है।"

"तू सिर के बाल देख, बाकी शरीर देख। मर्द है।"

"तू कपड़े देख, और सब कुछ देख। औरत है।"

"आओ, बच्चों आओ, पास आकर देखो," मिस पाल की आवाज़ से मैं जैसे चौंक गया। मिस पाल टिकट लेकर खिड़की से हट आई थी। बच्चे उसे आते देखकर 'आ गई, आ गई' कहते भाग खड़े हुए। एक बच्चे ने सड़क के उस तरफ जाकर फिर जोर से आवाज लगाई, "कमाल है भई कमाल है !"

मिस पाल सड़क पर आकर कई कदम बच्चों के पीछे चली गई।

"आओ बच्चो, , यहां हमारे पास आओ," वह कहती रही, "हम टॉफियां देंगे। आओ..." म तुम्हें मारेंगे नहीं,

मगर बच्चे पास आने के बजाय और भी दूर भाग गए। मिस पाल कुछ देर सड़क के बीच रुकी रही, फिर लौटकर मेरे पास आ गई। उस समय उसके चेहरे का भाव बहुत विचित्र लग रहा था। उसकी आंखों में आए हुए आंसू नीचे गिरने को हो रहे थे और उन्हें झुठलाने के लिए एक फीकी हंसी का प्रयत्न कर रही थी। उसने अपने ओठों को जाने किस तरह काटा था कि एकाध जगह से उसकी लिपस्टिक नीचे फैल गई थी। उसकी थिसी हुई कमीज की सीवनें कंधे के पास से खुल रही थीं। "खूबसूरत बच्चे थे; नहीं?" उसने आंखें झपकाते हुए कहा।

मैंने उसकी बात का समर्थन करने के लिए सिर हिलाया तो मुझे लगा कि मेरा सिर पत्थर की तरह भारी हो गया है। उसके बाद मेरी समझ में कुछ नहीं आया कि मिस पाल मुझमे क्या कह रही है और मैं उससे क्या बात कर रहा हूं; जैसे आंखों और शब्दों के साथ विचारों का कोई सम्बन्ध ही नहीं रहा था। मुझे इतना याद है कि मैंने मिस पाल को टिकट के पैसे देने का प्रयत्न किया, मगर वह रिछे हट गई और मेरे बहुत अनुरोध करने पर भी उसने पैसे नहीं लिए। मगर किस अवचेतन प्रक्रिया से हम लोगों के बीच अब तक बातचीत का सूत्र बना रहा, यह मैं नहीं जान सका। मेरे कान उसे बोलते सुन रहे थे और अपने को भी। परन्तु वे जैसे दूर की ध्वनियां थीं- अस्फुट, अस्पष्ट और अर्थहीन। जो बात मैं ठीक से सुन सका वह यही थी, "और वहां जाकर रणजीत, दफ्तर में मेरे बारे में किसी से बात मत करना। समझे ? तुम्हें पता ही है कि वे लोग कितने ओछे हैं। बल्कि अच्छा होगा कि तुम किसी को यह भी न बताओ कि तुम मुझे यहां मिले थे। मैं नहीं चाहती कि वहां कोई भी मेरे बारे में कुछ जाने या बात करे। समझे।"

बस तब स्टार्ट हो रही थी और मैं खिड़की से झांककर मिस पाल को देख रहा था। बस चली तो मिस पाल हाथ हिलाने लगी। दोनों खाली डिब्बे वह अपने हाथों में लिए हुए थी। मैंने भी एक बार उसकी तरफ हाथ हिलाया और बस के मुड़ने तक हिलते हुए खाली डिब्बों को ही देखता रहा।